International Journal for Multidisciplinary Research (IJFMR)
E-ISSN: 2582-2160 ● Website: www.ijfmr.com ● Email: editor@ijfmr.com

चुरू ज़िले में मरुस्थलीकरण की समस्या और उसके निवारण के उपाय

NITIN KUMAR

MA GEOGRAPHY
STATION MASTER, BIKANER DIVISION

1.1 प्रस्तावना

मरुस्थलीकरण आज विश्वस्तर पर एक गंभीर पर्यावरणीय संकट के रूप में उभर कर सामने आया है। संयुक्त राष्ट्र मरुस्थलीकरण नियंत्रण संधि (UNCCD, 1994) के अनुसार, मरुस्थलीकरण वह प्रक्रिया है जिसमें जलवायु परिवर्तन और मानवीय गतिविधियों के कारण शुष्क, अर्ध-शुष्क एवं शुष्क उप-आर्द्र क्षेत्रों की भूमि की उत्पादकता निरंतर घटती जाती है। अनुमानतः विश्व के लगभग 40 प्रतिशत भूभाग पर मरुस्थलीकरण का खतरा विद्यमान है, जिससे सीधे तौर पर लगभग 2 अरब लोग प्रभावित हो रहे हैं (United Nations, 2019)। भारत जैसे विकासशील देशों में यह समस्या और भी गंभीर है क्योंकि यहाँ की बड़ी आबादी कृषि और पशुपालन पर निर्भर है। भारत के कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का लगभग 30 प्रतिशत हिस्सा किसी न किसी रूप में मरुस्थलीकरण से प्रभावित है (ISRO, 2016)। विशेष रूप से राजस्थान राज्य में, जो कि देश का सर्वाधिक शुष्क राज्य है, मरुस्थलीकरण की समस्या गहन रूप से अनुभव की जाती है। राजस्थान के कुल क्षेत्रफल का लगभग 61.8 प्रतिशत भाग मरुस्थलीकरण से प्रभावित है (CAZRI, 2010)। इसी संदर्भ में चुरू ज़िला एक महत्त्वपूर्ण अध्ययन क्षेत्र के रूप में उभरता है, क्योंकि यह थार मरुस्थल के उत्तर-पूर्वी छोर पर स्थित है और यहाँ की भौगोलिक, जलवायु एवं सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियाँ मरुस्थलीकरण की समस्या को और तीव्र बना देती हैं। चुरू ज़िले में औसत वार्षिक वर्षा मात्र 300–350 मिमी के आसपास है, जो असमान एवं अनियमित रूप से वितरित होती है, साथ ही यहाँ पर गर्मियों में तापमान 48–50 डिग्री सेल्सियस तक पहुँच जाता है (Rajasthan Climate Report, 2020)। इन प्राकृतिक परिस्थितियों के साथ-साथ वनों की कमी, अति-चराई और भूमिगत जल के अत्यधिक दोहन जैसी मानवीय गतिविधियाँ इस क्षेत्र को मरुस्थलीकरण के लिए अत्यधिक संवेदनशील बना देती हैं। अतः चुरू ज़िले में मरुस्थलीकरण की समस्या एवं इसके निवारण उपायों का अध्ययन करना न केवल स्थानीय स्तर पर बल्कि राष्ट्रीय व वैश्विक स्तर पर भी अत्यंत प्रासंगिक है।

1.2 अध्ययन क्षेत्र

राजस्थान राज्य के उत्तर-पूर्वी भाग में अवस्थित चुरू ज़िला थार मरुस्थल का एक महत्त्वपूर्ण हिस्सा है। यह भौगोलिक रूप से 27°24′ से 29°00′ उत्तरी अक्षांश तथा 73°40′ से 75°41′ पूर्वी देशांतर के बीच स्थित है (District Census Handbook, Churu, 2011)। इसके उत्तर में हनुमानगढ़ एवं बीकानेर, दक्षिण में नागौर, पूर्व में सीकर तथा पश्चिम में जोधपुर ज़िले की सीमाएँ लगती हैं। चुरू ज़िले का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल लगभग 16,830 वर्ग किलोमीटर है, जो इसे राजस्थान के बड़े ज़िलों में स्थान देता है।

स्थलाकृति एवं जलवायु: चुरू का अधिकांश भाग समतल रेतीले मैदानी क्षेत्र से बना है, जिसमें बालू के टीलों (Sand Dunes) का वर्चस्व है। ये टीलें आंधी और हवाओं के साथ अपना स्वरूप बदलती रहती हैं। यहाँ की जलवायु अति-शुष्क है, जहाँ ग्रीष्म ऋतु में तापमान 48–50° C तक पहुँच जाता है, जबकि शीत ऋतु में तापमान 0° C से भी नीचे दर्ज किया गया है (Rajasthan Climate Report, 2020)। औसत वार्षिक वर्षा लगभग 300–350 मिमी है, जो अत्यंत असमान एवं अनिश्चित है।

मिट्टी एवं प्राकृतिक वनस्पति: चुरू ज़िले में प्रमुखतः हल्की, रेतीली एवं शुष्क बलुई मिट्टी पाई जाती है, जिसमें जलधारण क्षमता अत्यंत कम है। मिट्टी का कटाव तथा क्षारीयता यहाँ की प्रमुख समस्याएँ हैं। प्राकृतिक वनस्पति विरल है, जिसमें मुख्यतः खेजड़ी (Prosopis cineraria), बबूल (Acacia nilotica), रोहिड़ा (Tecomella undulata) और थोर जैसी झाड़ियाँ पाई जाती हैं। शुष्क परिस्थितियों के कारण चारागाहों का भी ह्रास हुआ है।

सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि: जनगणना 2011 के अनुसार चुरू ज़िले की कुल जनसंख्या लगभग 20.41 लाख है, जिसमें ग्रामीण जनसंख्या का प्रतिशत 68% से अधिक है। यहाँ की अर्थव्यवस्था मुख्यतः कृषि एवं पशुपालन पर आधारित है। बाजरा, ग्वार, मूंग, चना एवं जौ यहाँ की प्रमुख फसलें हैं, किन्तु वर्षा पर निर्भर कृषि प्रणाली इसे अत्यंत अस्थिर बनाती है। पशुपालन, विशेषकर ऊँट, भेड़ और बकरी पालन स्थानीय लोगों की आजीविका का आधार है। मरुस्थलीय परिस्थितियों एवं सीमित संसाधनों के कारण यहाँ से रोजगार हेतु प्रवासन (Migration) की प्रवृत्ति भी प्रबल है।

मानचित्र: अध्ययन क्षेत्र को भौगोलिक रूप से स्पष्ट करने के लिए चुरू ज़िले का ब्लॉक-वार मानचित्र (District Map with Blocks) संलग्न किया जाना आवश्यक है। इस मानचित्र में चुरू ज़िले की सीमा, तहसील/ब्लॉक, प्रमुख नगर तथा भौगोलिक विशेषताओं को प्रदर्शित किया जा सकता है।

1.3 मरुस्थलीकरण की अवधारणा

मरुस्थलीकरण एक ऐसी वैश्विक पर्यावरणीय प्रक्रिया है जो विशेष रूप से शुष्क एवं अर्ध-शुष्क क्षेत्रों में भूमि की उत्पादकता को निरंतर क्षीण करती है। संयुक्त राष्ट्र मरुस्थलीकरण नियंत्रण संधि (UNCCD, 1994) के अनुसार, *"मरुस्थलीकरण भूमि का क्षरण है जो शुष्क, अर्ध-शुष्क और शुष्क उप-आर्द्र क्षेत्रों में विभिन्न कारणों, जिनमें जलवायु परिवर्तन एवं मानवीय गतिविधियाँ शामिल हैं, के परिणामस्वरूप होता है"*। इसी प्रकार संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (UNEP, 1992) ने मरुस्थलीकरण को उस प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया है जिसमें मानवीय दबाव और प्रतिकूल प्राकृतिक परिस्थितियों के कारण भूमि की पारिस्थितिकीय क्षमता घट जाती है। भारत में भी यह समस्या अत्यंत गंभीर है, जहाँ कुल भू-क्षेत्र का लगभग 30 प्रतिशत भाग मरुस्थलीकरण से प्रभावित है (ISRO, 2016)।

मरुस्थलीकरण की पहचान कुछ प्रमुख संकेतकों (Indicators) के आधार पर की जाती है। पहला संकेतक है **भूमि क्षरण**, जिसमें भूमि की सतही परत का कटाव, बालू का जमाव और उपजाऊ मिट्टी का क्षरण शामिल

है। दूसरा संकेतक है **जल स्रोतों का लोप**, जो वर्षा की कमी, भूमिगत जल स्तर में गिरावट और तालाब-जोहड़ों के सूखने के रूप में परिलक्षित होता है। तीसरा है **जैव विविधता का क्षरण**, जिसमें स्थानीय वनस्पति और जीव-जंतुओं की प्रजातियों का लुप्त होना सम्मिलित है। चौथा प्रमुख संकेतक है **मिट्टी की उर्वरता में कमी**, जिसमें जैविक पदार्थों की कमी, पोषक तत्त्वों का अभाव और लवणीयता/क्षारीयता में वृद्धि देखी जाती है (CAZRI, 2010; United Nations, 2019)। इन संकेतकों के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि मरुस्थलीकरण केवल एक भौतिक समस्या नहीं है, बल्कि यह सामाजिक-आर्थिक जीवन, कृषि उत्पादन और पारिस्थितिकीय संतुलन पर भी गहरा प्रभाव डालता है।

1.4 चुरू ज़िले में मरुस्थलीकरण की स्थिति

चुरू ज़िला मरुस्थलीकरण की दृष्टि से राजस्थान के सर्वाधिक संवेदनशील क्षेत्रों में गिना जाता है। ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में देखें तो पिछले 30–40 वर्षों में यहाँ भूमि क्षरण और जल स्रोतों के लोप की प्रक्रिया तेजी से बढ़ी है। 1970–80 के दशक में चुरू का बड़ा भाग अर्ध-शुष्क माना जाता था, जहाँ पारंपरिक जल संचयन पद्धतियों (जोहड़, टांके, खडीन आदि) और चारागाहों के कारण भूमि की उत्पादकता आंशिक रूप से बनी हुई थी। किंतु 1990 के बाद से भूमिगत जल के अत्यधिक दोहन, ट्यूबवेल सिंचाई के विस्तार, वनों की कटाई और लगातार आने वाले सूखों ने मरुस्थलीकरण की प्रक्रिया को तीव्र कर दिया (Bhandari & Garg, 2000)।

रिमोट सेंसिंग और GIS आधारित अध्ययनों से यह स्पष्ट होता है कि चुरू ज़िले के कुल क्षेत्रफल का लगभग 70–75% भाग किसी न किसी रूप में मरुस्थलीकरण की चपेट में है (ISRO, 2016; CAZRI, 2010)। इसमें सबसे अधिक प्रभाव बालू के टीलों के विस्तार और भूमि की सतही परत के क्षरण के रूप में देखा गया है। भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (ISRO) के 2011–2013 के आकलन के अनुसार, चुरू में भूमि क्षरण की वार्षिक दर लगभग 0.5–1.0% पाई गई, जो राजस्थान के अन्य ज़िलों की तुलना में अधिक है (ISRO, 2016)।

ब्लॉकवार विश्लेषण से ज्ञात होता है कि **रत्नगढ़, तारानगर और सरदारशहर** ब्लॉक मरुस्थलीकरण से सर्वाधिक प्रभावित हैं, जहाँ औसत वर्षा 250–300 मिमी से भी कम है और भूजल स्तर 120–150 मीटर गहराई तक गिर चुका है। **चुरू मुख्यालय और राजगढ़ ब्लॉक** में भी मरुस्थलीकरण की समस्या गंभीर है, विशेषकर अति-चराई और बालू के टीलों के बढ़ते विस्तार के कारण। वहीं **सुइजंग और बीदासर क्षेत्र** में वनों के अभाव और निरंतर कटाव ने पारिस्थितिकीय असंतुलन को और गहरा किया है।

गाँव स्तर पर देखें तो **सुइजंग, झंझार, जसरासर, सिधमुख और भालेरी** क्षेत्र के गाँवों में मरुस्थलीकरण के कारण कृषि भूमि बंजर हो चुकी है। कई गाँवों में परंपरागत तालाब और जोहड़ सूख चुके हैं, जिससे पेयजल संकट भी बढ़ गया है। इन परिस्थितियों के चलते ग्रामीण आजीविका पर गहरा असर पड़ा है और बड़ी संख्या में लोग मौसमी प्रवासन के लिए बाध्य हुए हैं (Rajasthan State Action Plan on Climate Change, 2020)।

1.5 मरुस्थलीकरण के कारण

चुरू ज़िले में मरुस्थलीकरण की समस्या प्राकृतिक एवं मानवीय दोनों कारणों से उत्पन्न हुई है। प्राकृतिक कारणों में प्रमुख है **अल्प एवं अनियमित वर्षा**, जो यहाँ औसतन 300–350 मिमी प्रतिवर्ष होती है, किंतु इसका वितरण अत्यंत असमान और अनिश्चित है। कई बार वर्षा का अधिकांश भाग कुछ ही दिनों में अत्यधिक तीव्रता के साथ हो जाता है, जिससे मिट्टी की ऊपरी परत बहकर चली जाती है और भूमि की उत्पादकता घट जाती है (Rajasthan Climate Report, 2020)। दूसरा कारण है **बार-बार आने वाला सूखा**, जिसने ग्रामीण जीवन और कृषि प्रणाली को गहराई से प्रभावित किया है। पिछले तीन दशकों में चुरू ज़िले ने लगभग 18–20 सूखा वर्षों का अनुभव किया है (CAZRI, 2010)। इसके अतिरिक्त, **लू और धूलभरी आँधियाँ** यहाँ की विशिष्ट जलवायु विशेषताएँ हैं, जो न केवल वनस्पति को नष्ट करती हैं बल्कि भूमि की सतह पर रेत जमाव और मिट्टी क्षरण को भी बढ़ाती हैं (Singh & Joshi, 2014)।

मानवीय कारण भी मरुस्थलीकरण की गति को और तीव्र बनाते हैं। इनमें सबसे पहला है **अति-चराई (Overgrazing)**। चुरू ज़िले में पशुपालन स्थानीय आजीविका का मुख्य आधार है, परंतु भेड़-बकरी तथा ऊँट की बढ़ती संख्या ने चारागाहों पर अत्यधिक दबाव डाला है, जिसके कारण प्राकृतिक वनस्पति तेजी से समाप्त हो रही है। दूसरा कारण है **वनों की कटाई और वृक्षों का अभाव**, जिससे रेत को रोकने वाले प्राकृतिक अवरोध कम हो गए हैं और बालू के टीलों का विस्तार बढ़ा है। तीसरा महत्त्वपूर्ण कारण है **भूमिगत जल का अंधाधुंध दोहन**। पिछले तीन दशकों में ट्यूबवेल तकनीक के व्यापक उपयोग ने भूजल स्तर को 100–150 मीटर तक गिरा दिया है, जिससे न केवल कृषि अस्थिर हुई है बल्कि भूमि की लवणीयता भी बढ़ी है (ISRO, 2016)। इसके अतिरिक्त **अनुचित खेती पद्धतियाँ**, जैसे अधिक जल की माँग करने वाली फसलों (जैसे- ग्वार, कपास) की ओर रुझान, ने मिट्टी की उर्वरता और जल संसाधनों को नुकसान पहुँचाया है। अंततः **शहरीकरण और जनसंख्या दबाव** भी एक महत्त्वपूर्ण कारण हैं। चुरू नगर तथा आस-पास के कस्बों में जनसंख्या वृद्धि और भूमि के गैर-कृषि उपयोग में वृद्धि ने कृषि योग्य भूमि के सिकुड़ने और भूमि क्षरण की समस्या को बढ़ा दिया है (Rajasthan State Action Plan on Climate Change, 2020)।

1.6 मरुस्थलीकरण के प्रभाव

चुरू ज़िले में मरुस्थलीकरण ने जीवन के लगभग हर पहलू को प्रभावित किया है। सबसे पहले, इसका प्रत्यक्ष प्रभाव **कृषि उत्पादन** पर देखा जाता है। भूमि की उर्वरता में कमी, बालू के जमाव और मिट्टी के क्षरण के कारण बाजरा, ग्वार, मूंग, चना जैसी पारंपरिक फसलों का उत्पादन लगातार घट रहा है। अनेक गाँवों में कृषि भूमि बंजर में बदल चुकी है, जिससे खाद्यान्न असुरक्षा बढ़ी है (Bhandari & Garg, 2000)। दूसरा प्रभाव **पशुपालन** पर पड़ता है। चुरू की ग्रामीण अर्थव्यवस्था में ऊँट, भेड़ और बकरी पालन केंद्रीय स्थान रखते हैं, परंतु चारागाहों के क्षरण और प्राकृतिक चारे की कमी ने पशुओं की सेहत और उत्पादकता दोनों को प्रभावित किया है (Singh & Joshi, 2014)।

तीसरा महत्त्वपूर्ण परिणाम है **जल संकट**। भूमिगत जल स्तर 100–150 मीटर से भी नीचे पहुँच जाने के कारण न केवल सिंचाई असंभव हो गई है, बल्कि ग्रामीण क्षेत्रों में पेयजल की समस्या विकराल रूप ले चुकी है। कई

गाँवों में टैंकरों और नलकूपों पर निर्भरता बढ़ी है, जिससे पानी की उपलब्धता महँगी और असमान हो गई है (Rajasthan Climate Report, 2020)। इसके साथ ही **ग्रामीण आजीविका और प्रवासन** भी गहराई से प्रभावित हुए हैं। मरुस्थलीकरण के कारण खेती और पशुपालन से मिलने वाली आय घटने लगी, जिसके चलते बड़ी संख्या में ग्रामीण विशेषकर युवा, रोज़गार की तलाश में जयपुर, दिल्ली और हरियाणा जैसे शहरों की ओर पलायन करने लगे (CAZRI, 2010)।

इसके अतिरिक्त, मरुस्थलीकरण से **सामाजिक-आर्थिक असमानताएँ** भी बढ़ी हैं। सीमित संसाधनों पर प्रतिस्पर्धा के कारण छोटे और सीमांत किसान सबसे अधिक प्रभावित हुए हैं, जबकि बड़े किसानों ने गहरे ट्यूबवेल और आधुनिक तकनीक के माध्यम से आंशिक रूप से इस संकट से निपटा। परिणामस्वरूप, ग्रामीण समाज में आर्थिक असमानताएँ और सामाजिक तनाव बढ़े हैं।

पर्यावरणीय दृष्टि से भी इसके गंभीर दुष्परिणाम सामने आए हैं। मरुस्थलीकरण के चलते **जैव विविधता में कमी** आई है–खेजड़ी, रोहिड़ा और स्थानीय चारागाह घासें तेजी से लुप्त हो रही हैं। पक्षियों और वन्यजीवों का प्राकृतिक आवास भी नष्ट हुआ है। साथ ही, भूमि क्षरण और रेत के जमाव ने **जलवायु परिवर्तन के संकेत** और तीव्र कर दिए हैं, जैसे कि तापमान में निरंतर वृद्धि, वर्षा की अनिश्चितता और चरम मौसमी घटनाओं (Extreme Weather Events) में वृद्धि (United Nations, 2019)। इस प्रकार, चुरू ज़िले में मरुस्थलीकरण केवल एक भौगोलिक या पर्यावरणीय समस्या न होकर सामाजिक-आर्थिक और पारिस्थितिकीय संकट के रूप में उभर कर सामने आया है।

1.7 मरुस्थलीकरण से निपटने के उपाय

चुरू ज़िले में मरुस्थलीकरण की समस्या से निपटने के लिए पारंपरिक और आधुनिक दोनों प्रकार के उपाय अपनाए गए हैं। परंपरागत रूप से यहाँ के ग्रामीण समुदाय **जोहड़, तालाब, टांके और खडीन** जैसी जल संचयन पद्धतियों का उपयोग करते आए हैं। ये संरचनाएँ न केवल वर्षा जल को संग्रहित करती थीं बल्कि भूमिगत जल स्तर को recharge करने में भी सहायक थीं (Agarwal & Narain, 1997)। इसी प्रकार, **चारागाह प्रबंधन** और सामुदायिक भूमि पर चराई नियंत्रण ग्रामीण जीवन का हिस्सा रहा है, जिसने मरुस्थलीकरण को काफी हद तक रोकने में योगदान दिया।

आधुनिक स्तर पर, विभिन्न तकनीकी और वैज्ञानिक उपाय विकसित किए गए हैं। इनमें सबसे प्रमुख है **जल संरक्षण तकनीक**, जैसे- *Rainwater Harvesting* और *Drip Irrigation*, जो कम पानी में अधिक उत्पादन देने में सहायक हैं (ICAR, 2018)। **वनीकरण और सामाजिक वानिकी** भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं, जिनके तहत खेजड़ी, रोहिड़ा, बबूल जैसे स्थानीय वृक्षों के रोपण से न केवल भूमि क्षरण रोका जा सकता है बल्कि चारागाहों और ग्रामीण आजीविका को भी सुदृढ़ किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त, **चराई पर नियंत्रण और चारागाह विकास** की नीतियाँ भी लागू की जा रही हैं, जिनमें गाँव स्तर पर गोचर भूमि का संरक्षण और पौधारोपण शामिल है। **सतत कृषि पद्धतियाँ** जैसे- मिश्रित खेती, फसल चक्र, कम जल वाली फसलों का चयन और जैविक खादों का प्रयोग भी मरुस्थलीकरण नियंत्रण के लिए उपयोगी हैं। इसके अलावा, **रिमोट सेंसिंग आधारित निगरानी**

(Remote Sensing & GIS) आज के समय में एक सशक्त उपकरण है, जिसके माध्यम से भूमि क्षरण की सीमा, रेत के टीलों की गति और वनस्पति परिवर्तन का आकलन किया जा सकता है (ISRO, 2016)।

नीतिगत स्तर पर भी अनेक प्रयास किए गए हैं। **राजस्थान सरकार** ने *मुख्यमंत्री जल स्वावलंबन अभियान* और *राजस्थान राज्य कार्य योजना जलवायु परिवर्तन (RSAPCC, 2020)* जैसी योजनाएँ लागू की हैं। इसी प्रकार, **ICAR और CAZRI, जोधपुर** ने मरुस्थलीय क्षेत्रों में वैज्ञानिक कृषि और चारागाह विकास की कई तकनीकें विकसित की हैं। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर, **संयुक्त राष्ट्र मरुस्थलीकरण नियंत्रण संधि (UNCCD, 1994)** के तहत भारत ने भी प्रतिबद्धता जताई है कि वह वर्ष 2030 तक 26 मिलियन हेक्टेयर भूमि का *land degradation neutrality* प्राप्त करेगा (United Nations, 2019)। इन उपायों से स्पष्ट है कि मरुस्थलीकरण की समस्या से निपटने के लिए केवल तकनीकी हस्तक्षेप ही पर्याप्त नहीं हैं, बल्कि सामुदायिक भागीदारी, पारंपरिक ज्ञान और नीतिगत समर्थन का सम्मिलित दृष्टिकोण आवश्यक है।

1.9 निष्कर्ष

चुरू ज़िले के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि मरुस्थलीकरण यहाँ केवल एक **भौगोलिक समस्या** न होकर बहुआयामी सामाजिक-आर्थिक और पर्यावरणीय संकट है। पिछले तीन-चार दशकों में वर्षा की अनियमितता, लगातार सूखे, तेज हवाओं और मानवीय कारणों–जैसे अति-चराई, वनों की कटाई, भूमिगत जल का अत्यधिक दोहन और अनुचित कृषि पद्धतियों–ने इस प्रक्रिया को और तेज कर दिया है (Singh & Joshi, 2014; CAZRI, 2010)। परिणामस्वरूप, कृषि उत्पादन में गिरावट, पशुपालन संकट, जल की कमी, आजीविका का ह्रास और ग्रामीण पलायन जैसे गंभीर प्रभाव सामने आए हैं। साथ ही, स्थानीय जैव विविधता में कमी और पारिस्थितिकी असंतुलन ने जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों को और बढ़ा दिया है (United Nations, 2019)।

भविष्य की संभावनाओं पर विचार करें तो यह समस्या अजेय नहीं है। चुरू जैसे शुष्क क्षेत्र में **पारंपरिक जल संचयन प्रणालियों** (जोहड़, तालाब, टांके, खडीन) के पुनर्जीवन, **आधुनिक तकनीकों** (ड्रिप सिंचाई, रेनवाटर हार्वेस्टिंग, सौर ऊर्जा आधारित पंप) के प्रयोग, तथा **वनीकरण एवं चारागाह विकास** से इस समस्या को काफी हद तक नियंत्रित किया जा सकता है (Agarwal & Narain, 1997; ICAR, 2018)। इसके अलावा, **रिमोट सेंसिंग और GIS आधारित निगरानी** भविष्य में मरुस्थलीकरण की सटीक स्थिति और उसके नियंत्रण उपायों की दिशा तय करने में उपयोगी सिद्ध होगी। नीति निर्माताओं और स्थानीय समाज के लिए सुझाव यह हैं कि–

1. **नीति स्तर पर**: भूमि क्षरण नियंत्रण हेतु ठोस कार्य योजनाएँ, ग्रामीण स्तर पर जल प्रबंधन समितियाँ, और सामुदायिक भागीदारी आधारित कार्यक्रम विकसित किए जाएँ।
2. **स्थानीय समाज के लिए**: चारागाह संरक्षण, सामूहिक वृक्षारोपण, जल संरक्षण एवं पारंपरिक पद्धतियों को पुनर्जीवित करने की दिशा में सक्रिय भूमिका निभानी चाहिए।
3. **संस्थानिक योगदान**: ICAR, CAZRI और राज्य सरकार की योजनाओं को जमीनी स्तर पर क्रियान्वित करने के लिए पंचायत स्तर तक तकनीकी सहयोग पहुँचाना आवश्यक है।

अतः निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि यदि **पारंपरिक ज्ञान, आधुनिक तकनीक और नीतिगत सहयोग** को मिलाकर सामूहिक प्रयास किए जाएँ तो चुरू ज़िले में मरुस्थलीकरण की चुनौती को अवसर में बदला जा सकता है। इससे न केवल भूमि और जल संसाधनों का संरक्षण होगा बल्कि स्थानीय समाज की आजीविका, पारिस्थितिकी संतुलन और सतत विकास की दिशा में ठोस कदम बढ़ाए जा सकेंगे।

संदर्भ सूची

1. अग्रवाल, अन्ना., एवं नारायण, सुनीता. (1997). *Dying wisdom: Rise, fall and potential of India's traditional water harvesting systems*. नई दिल्ली: सेंटर फॉर साइंस एंड एनवायरनमेंट।
2. भंडारी, पी., एवं गर्ग, आर. (2000). राजस्थान में मरुस्थलीकरण: कारण और परिणामों का अध्ययन। *इंडियन जर्नल ऑफ एनवायरनमेंटल मैनेजमेंट*, 24(2), 101–115।
3. काज़री (CAZRI). (2010). *रेगिस्तानी क्षेत्रों में मरुस्थलीकरण की स्थिति का मानचित्रण: रिमोट सेंसिंग एवं जीआईएस के माध्यम से*। जोधपुर: केंद्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान (आईसीएआर)।
4. भारत सरकार, जनगणना विभाग। (2011). *जिला जनगणना पुस्तिका: चुरू*। नई दिल्ली: रजिस्ट्रार जनरल एवं जनगणना आयुक्त, भारत।
5. राजस्थान सरकार। (2020). *राजस्थान राज्य कार्य योजना जलवायु परिवर्तन (RSAPCC)*। जयपुर: पर्यावरण विभाग, राजस्थान।
6. आईसीएआर (ICAR). (2018). *Technologies for combating desertification in arid regions*। नई दिल्ली: भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद।
7. आईएमडी (IMD). (2020). *Rainfall statistics of India, 1901–2020*। पुणे: भारत मौसम विज्ञान विभाग, भारत सरकार।
8. इसरो (ISRO). (2016). *भारत का मरुस्थलीकरण एवं भूमि क्षरण एटलस (द्वितीय संस्करण)*। अहमदाबाद: स्पेस एप्लीकेशन सेंटर, भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन।
9. सिंह, आर. बी., एवं जोशी, पी. के. (2014). भारत में भूमि क्षरण और मरुस्थलीकरण। *जर्नल ऑफ ज्योग्राफी एंड रीजनल प्लानिंग*, 7(2), 25–34. https://doi.org/10.5897/JGRP2013.0400
10. संयुक्त राष्ट्र। (1994). *United Nations Convention to Combat Desertification (UNCCD)*। पेरिस: संयुक्त राष्ट्र।
11. संयुक्त राष्ट्र। (2019). *The global land outlook*। बॉन: UNCCD सचिवालय।